DOI-10.53571/NJESR.2022.4.1.70-83

राजस्थानी चित्रकला का सिरमौर–किशनगढ़ चित्र शैली

डॉ. शंकर शर्मा
सहायक आचार्य, चित्रकला
से.म.बि राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
नाथद्वारा

(Received:30December2021/Revised:18January2022/Accepted:23January2022/Published:26January2022)

सारांश–भारतीय चित्रकला अपनी विशेषताओं के कारण विश्व प्रसिद्ध है। यहां की चित्रकला का भावात्मक एवं तकनीकी पक्ष अत्यंत समृद्ध है। यहां की कला का प्रमुख आधार धर्म एवं संस्कृति रहा है। अजंता से लेकर मध्यकाल तक हमें भारतीय चित्रकला में धार्मिकता सर्वत्र दिखाई देती है लेकिन यह धार्मिकता इसके तकनीकी एवं भावात्मक पक्ष को कहीं कमजोर नहीं करती। भारतीय चित्रकला में ऐसी कई शैलियां है जो कलात्मक दृष्टि से अतुलनीय है, इन्हीं में से एक कला शैली है राजस्थान की किशनगढ़ शैली, यह शैली अपनी काव्यात्मकता, अलंकरण एवं इसमें निहित भाव सौंदर्य के कारण विश्व कला में अद्वितीय है। यह शैली भारतीय कला शैलियों के साथ ही राजस्थानी चित्रकला की उपशैलियों मैं अपना एक अलग ही स्थान रखती है। इसमें निहित सौंदर्य के कारण यदि इस शैली को राजस्थानी कला का 'सिरमौर' कहा जाए तो गलत नहीं होगा।

कठिन शब्द–प्रेमासक्ति–प्रेम में आस्कती या अनुराग, स्नेह, लगाव

सिरमौर– सिर का ताज

कलाएं दर्पण है, यह दर्पण है समय का, संस्कृति का । मानव विकास की परत दर परत व्याख्या करते हुए कलाए मानव संगिनी के रूप में सदैव साथ रही है। दर्पण के रूप में हम इसके सहारे मानवीय संस्कृति के अतीत का संपूर्ण दर्शन कर पाते हैं। मानव के विकास के साथ ही इसका अपना विकास भी निरंतरता लिए रहा है, जो प्रागैतिहासिक काल से लेकर समकालीन कला तक दृष्टव्य है। इस

यात्रा में मानव विकास की तरह ही कई रूपांतरण इसमें भी दिखाई देते हैं। निरंतर नित्य नए प्रभावों को आत्मसात कर, रूपांतरण कर यह मानव की सौंदर्य पिपासा को शांत करती रही है, इस रूपांतरण में जहां इसने अतीत के गौरव को अक्षुण्ण रखा है, वही नये आग्रहों के प्रति भी यह पूर्ण उदारवादी रही है। इसका स्पष्ट उदाहरण हमारी भारतीय कला रही है, जो अपने प्राचीन गौरवमयी इतिहास के साथ ही समय–समय पर पड़ने वाले बाहरी प्रभावों को आत्मसात कर नए रूपों की सृजन की परंपरा को संजोए हुए हैं। भारतीय कला का प्रमुख अंग होने के कारण राजस्थानी शैली में भी सहज ही यह गुण प्रतिबिंबित होता है। यहां की उप शैलियों में जहां स्थानीय शैलियों का निजपन झलकता है, वहीं बाहरी प्रभावों को अपनाकर इसने अपनी भव्यता को नई ऊंचाइयों दी है। राजस्थान की उप शैलियों में किशनगढ़ शैली का अपना एक अलग स्थान है, इस शैली ने अपनी भव्यता से न सिर्फ राजस्थान अपितु भारतीय कला को विश्व पटल पर एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं।

राजस्थान के चित्रकारों का एक प्रमुख गुण रहा है, कलात्मक उदारता। इस कारण समन्वयवादी दृष्टिकोण उनके चित्रों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रवृत्ति के कारण ही भारतीय कला विश्व जगत में अपना एक अलग स्थान रखती है। राजस्थान की सांस्कृतिक परंपरा एवं कलात्मकता को हम यहां के चित्रों के माध्यम से जानते हैं । राजस्थान के चित्र यहां की संस्कृति एवं परंपरा के मूक साक्षी हैं। समन्वय के कारण ही राजस्थानी कला में मौलिकता के साथ ही अनेक उप शैलियों के भी दर्शन होते हैं। मेवाड़, कोटा, बूंदी, नाथद्वारा, जयपुर, अलवर, बीकानेर, किशनगढ़ आदि उपशैलियो में जहां हमें सांस्कृतिक चेतना के दर्शन होते हैं, वही अंकन पद्धतियों में विविधता दिखाई देती है। किशनगढ़ शैली अपनी भव्यता के कारण न सिर्फ राष्ट्रीय अपितु अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जानी एवं पहचानी जाती है। ''किसी भूभाग की संस्कृति में अनेक उपकरण घुले मिले होते हैं, जिसमें

धार्मिक और सामाजिक भावनाओं का आधार प्रमुख होता है। किशनगढ़ चित्र शैली की रचना में भी यही आधार रहा है। भौगोलिक एवं ऐतिहासिक प्रभावों ने इस शैली के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।''[1]

भारतीय कलाओं में धार्मिक भावनाओं का स्पंदन सर्वत्र दिखाई देता है, किशनगढ़ शैली भी इससे अछूती नहीं रही है। ''धार्मिक विरासत एवं कला पर किशनगढ़ के राजाओं को कई पीढ़ियों में मिला, यही संस्कार संस्कारित होते हुए एक आस्था का मूर्त आधार बने, क्योंकि लगभग किशनगढ़ के सभी राजाओं ने वल्लभ संप्रदाय की शिक्षा ग्रहण की थी। इस कारण सभी के प्रिय राधा–कृष्ण का सर्वत्र गान स्वाभाविक था।''[2]

भक्ति रस में मग्न किशनगढ़ के राजा, कवि, चित्रकार, संगीतकार, राधा–कृष्ण मय हो गए। किशन सिंह जो कि किशनगढ़ के संस्थापक थे, उन्होंने काव्य एवं कला के संरक्षण का जो बीज बोया वह उनके आगे की 5 पीढ़ियों के आश्रय में फल–फूल कर वटवृक्ष बन गया और सामन्त सिंह के समय काल में तो यहां के साहित्यिक व कलात्मक विकास ने इस शैली को भारतीय कला का ''सिरमौर'' बना दिया।

''भारतीय जीवन का मूल आधार धर्म है तथा यहां की संस्कृति की नींव ही धर्म पर आधारित है।''[3] धर्म से परे भारतीय कला एवं संस्कृति की कल्पना भी अधर्म है। मध्य काल में जब बाहरी आक्रमणों द्वारा हमें हमारी धार्मिक परंपराओं एवं संस्कृति से विमुख करने का प्रयत्न किया गया तो भक्ति आंदोलन के रूप में उसका प्रतिरोध सामने आया। यह प्रतिरोध कलाओं में भी व्यापक तौर पर दिखाई देता है। 17$^{वी}$ शताब्दी में औरंगजेब की दमनकारी नीतियों के प्रतिरोध स्वरुप कलाओं में धार्मिक भावनाएं और बलवती हो गई। ''भारत की वैभव और कलात्मक भूमि पर मुगलों का साम्राज्य जितना भी रहा हो, किंतु राजस्थान ने अपनी सांस्कृतिक धरोहर को धर्म और कला से आच्छादित रखा है। धर्म में जिस

शक्ति पर विश्वास किया जाता है वह आलौकिक शक्ति मानी जाती है। और यह शक्ति सभी कुछ कर सकती है।''[4] यही कारण है कि जब औरंगजेब के शासन काल में भारतीय कला और साहित्य को अपनी मूल भावना से विमुख करने का प्रयत्न होने लगा तो कलाकारों ने अनुकूल वातावरण में प्रश्रय पाने हेतु किशनगढ़ जैसे छोटे–छोटे राज्यों की ओर मुख किया और अपनी भक्ति तथा भावना से भारतीय कला के नए अध्याय रच डालें।

लोक से परलोक और आत्मा से परमात्मा को प्राप्त करने का दृष्टिकोण ही भारतीय कला में अध्यात्म रूपी बीज के रूप में स्थापित है। प्रकृति एवं पुरुष के रूप में राधा तथा कृष्ण के मिलन की कल्पना यहां के कलाकारों की मूल भावना के रूप में प्रतिष्ठित है एवं यही विचार विषय रूप में यहां की कलाओं में दृष्टव्य है। राधा कृष्ण का जो मनोरम चित्रण जिस आध्यात्मिकता के साथ किशनगढ़ के चित्रकारों ने किया है वह अद्वितीय है इस संदर्भ में श्री राय कृष्णदास ने अपनी पुस्तक 'भारतीय चित्रकला' में लिखा है कि ''स्वर्ग को भी विमुग्ध कर देने वाली इन झांकियों में कल्पना की ऐसी पारदृष्टि है कि पार्थिव जगत में ही बैठकर हम उसका रसपान कर लेते हैं, इस प्रकार के चित्र किशनगढ़ शैली की ही मौलिक देन है।''[5]

कहा जाता है कि संस्कृति जीवन का दर्शन है इसी से जीवन दर्शन का निर्माण होता है, और इस जीवन दर्शन में एक, दो नहीं कई पीढ़ियों का योगदान रहता है। किशनगढ़ शैली की भक्ति परंपरा का चरमोत्कर्ष यद्यपि सावंत सिंह जिनका उपनाम 'नागरिदास' था के समय काल में विशेष रुप से दिखाई देता है तथापि इस भक्ति परंपरा में पीढ़ियों का योगदान रहा। साहित्य, काव्य प्रेम और कृष्ण भक्ति परंपरा सावंत सिंह जी को अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई यह विरासत कृ ष्ण सिंह, भारमल रूप सिंह, मान सिंह से होते हुए उनके पिता राजसिंह से उन्हें प्राप्त हुई। वल्लभ संप्रदाय के गुरु श्री रणछोड़ जी के द्वारा दीक्षित सावंत सिंह

ने काव्य चित्रण एवं संगीत तीनों ललित कलाओं में किशनगढ़ शैली को अद्वितीय स्थान दिलाया। वह रूप सौंदर्य के प्रति तो समर्पित थे ही, उनमें भावुक ह्रदय की भक्ति भावना भी थी। रूप सौंदर्य के प्रति आध्यात्मिक दर्शन और भक्ति भावना के कारण ही उन्होंने गृहस्थ होते हुए भी योगी की भांति जीवन व्यतीत किया व किशनगढ़ शैली में नए ओज के साथ प्राणवायु फूकी।

काव्य में राधा कृष्ण को समर्पित किशनगढ़ शैली के हर चित्र में भक्ति भावना, आध्यात्मिकता एवं समर्पण के दर्शन होते हैं यहां हर जगह भक्तिमय तत्व की प्रधानता है, चाहे वह चित्र कृष्ण और राधा की उपासना का हो या फिर सांझीलीला का।

किशनगढ़ शैली के चित्रों में कृष्ण तथा राधा, नायक– नायिका के रूप में तो है ही, लेकिन उनका दर्शन उपासक तथा उपास्य के रूप में भी प्रत्यक्ष होता है। यहां समर्पण है, त्याग है, भाव है, भक्ति है। प्रेमी तथा प्रेमिका के रूप में चित्रित राधा तथा कृष्ण में भी प्रेमी गौण और 'प्रेम' सत्य शिव एवं सुंदर के रूप में अवस्थित है। भक्ति दर्शन के आचार्यों का इस संदर्भ में कथन है कि ''यह अतिशय प्रेमासक्ति की साधना हे, यह ना रूपासक्ति है ना कामासक्ति है, यह प्रेमास्कती है, केवल प्रेम में आसक्ति है, प्रिय में आसक्ति नहीं। यहां प्रिय की प्राप्ति पर कोई बल नहीं है बल्कि प्रेम न छूटे इस पर बल है।''[6] आध्यात्मिकता का दूसरा रूप किशनगढ़ शैली में भक्त एवं भगवान के रूप में दिखाई देता है। वल्लभ संप्रदाय की भक्ति परंपरा का दर्शन चित्रों में दिखाई देता है। 'गोवर्धन–धारण' नामक चित्र इसका उत्तम उदाहरण है। चित्र के मध्य गोवर्धन धारण किए कृष्ण के आसपास जो गोपीकॉए खड़ी है, उनके चेहरे पर अपने आराध्य के प्रति उपासना के जो भाव है, वह अपने आप में अप्रतिम है। यह भाव इन सखा एवं सखियों की शारीरिक भंगिमा से और भी अधिक स्पष्ट होते हैं। चित्र का संपूर्ण वातावरण भक्ति भाव से परिपूर्ण दिखाई देता है। 'स्वामी हरिदास को सुनते हुए अकबर तथा तानसेन'

नामक अन्य चित्र इसी प्रकार का एक अन्य उदाहरण है। इसमें अद्‌भुत भावाभिव्यंजना का प्रदर्शन किया गया है।

किशनगढ़ शैली में राधा कृष्ण की युगल–लीला के सैकड़ों चित्र बने। यहां कलाकार ने अपनी कल्पनाशीलता को अद्‌भुत आयाम दिए हैं। आत्मा और परमात्मा के मिलन की अभिलाषा यहां राधा–कृष्ण के युगल स्वरूप में उद्धृत हुई है। (चित्र संख्या 1) इस शैली को समृद्धिशाली बनाने में सावन्त सिंह कि वैष्णव धर्म के प्रति आस्था, कल्पना–शक्ति एवं भावुकता और उनकी प्रेमिका 'बणीठणी' का प्रमुख योगदान रहा। साथ ही उन्हें निहालचंद जैसा श्रेष्ठ कलाकार भी मिल गया जिसने सावंत सिंह और बणीठणी के प्रेम को आधार मानकर राधा–कृष्ण की अनुभूति करते हुए ऐसी चित्र सृष्टि की जो कालांतर में राधा रूप में चित्रित ' बणीठणी ' 'राधा' का पर्याय बन गई। (चित्र संख्या 2) जिसका कई कलाकारों ने अनुकरण किया। किशनगढ़ शैली ने आकार निर्मिती, अलंकरण, साज–सज्जा, प्रकृति चित्रण एवं कलात्मक दृष्टि से जो ऊंचाइयां प्राप्त कि वह आगे आने वाली शताब्दियों तक कलाकारों के लिए प्रेरणा स्रोत बनी हुई है। इस शैली का अपना एक अलग आकृति विधान रहा है, किशनगढ़ शैली के चित्रों में निर्मित नारी एवं पुरुष आकृतियां अन्य भारतीय शैलियों की अपेक्षा एक अलग ही रूप में दिखाई देती है। लंबी छरहरी, क्षीण कटी वाली यह कमनीय आकृतियां बरबस ही दर्शकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। गौर वर्ण मुखाकृतियों में धनुषाकार चाप लिए खंजनाकृति नेत्र जो सामान्य से अधिक लंबे खींचे होते हैं, चेहरे के आकर्षण में मुख्य स्थान रखते हैं। किशनगढ़ के चितेरो ने अपनी विशिष्ट शैली से 'बणीठणी' की आंखों को ऐसा जादुई रूप दिया है कि संपूर्ण विश्व इसके मोहपाश में बंध गया। काजल की गहरी कालीमायुक्त खंजनाकृति नेत्र जिस मादकता का भाव लिए चित्रों में दिखाई देते हैं, वैसा उदाहरण विश्व कला में अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता।

(चित्र संख्या–1)

(चित्र संख्या–2)

आंखों की भांति ही नुकीली चिबुक, लंबी भुजाएं, पतली सुकुमार उंगलियों वाले हाथ, एक नया आकृति विधान रचते हैं। जहां मुगल शैली की आकृतियां अंकन शैली में कोमल होते हुए भी बेजान प्रतीत होती है, वही किशनगढ़ शैली की आकृतियां अत्यंत सजीव व मनमोहक दिखाई देती है। इन आकृतियों की हस्त मुद्राएं भी भाव– प्रधान एवं सजीव दिखाई देती है। ''इस शैली में चितवन तथा हस्त व मुख मुद्राओं के भाव स्पष्टीकरण में रेखाओं का सौंदर्य देखते ही बनता है''[7]

अलंकरण किशनगढ़ शैली का वो पक्ष है जो इस शैली को इसकी समकालीन अन्य शैलियों से एक पृथक स्थान पर खड़ा करता है। अजन्ता शैली में अलंकरण का जो उन्नत स्वरूप दिखाई देता है वही हमें पुनः किशनगढ़ शैली में दृष्टव्य होता है। रत्न जड़ित आभूषणों के इतने विविध रूप अन्य भारतीय शैलियों में शायद ही कहीं दिखाई देते हो, मोतियों की मालाओं से लदी छरहरी स्त्री आकृतियों का दर्शन अद्भुत है। कलाकारों ने बड़े ही संयम से एक–एक मोती जोड़कर यह मालॉए बनाई है, जो आकृतियों द्वारा धारण किए हुए पारदर्शी वस्त्रों के साथ शोभा को द्विगुणित कर देती है। क्योंकि यह कला मुगल शैली से प्रभावित रही है, अतः आकृतियों के पहनावे में मुगल प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। मुगल

शैली की भांति ही कृष्ण के दुपट्टे, अंगरखी तथा राधा एवं राधा के साथ कि अन्य नारी आकृतियों के महीन बेल–बूटों द्वारा सुसज्जित परिधान इस शैली को भव्यता प्रदान करते हैं।

मानव आकृतियों के अंकन में किशनगढ़ के कलाकारों ने जिस कल्पना शक्ति एवं अलंकरण का प्रयोग किया है वहीं प्रयोग प्रकृति चित्रण में भी किया है। यहां प्रकृति चित्रण को प्रेम के प्रमुख उपादान के रूप में कलाकारों ने स्थान दिया है। प्रकृति का सुक्ष्मता से निरीक्षण कर उसका अलंकारिक रूप में चित्रण, किशनगढ़ शैली की मुख्य विशेषता रही है। चित्रित मानव आकृतियों के भावों का आलोढन पृष्ठभूमि के रूप में चित्रित प्रकृति में भी देखने को मिलता है।

प्रकृति का प्रतीकात्मक अंकन यहां के चित्रों की एक और मुख्य विशेषता रही हे। प्राकृतिक पृष्ठभूमि चित्रित आकृतियों, नायक–नायिकाओ के भावों के साथ सामंजस्य स्थापित करते हुए दिखाई देती है। जैसे प्रेमी युगल के हृदय में पल्लवित प्रेम को, सुगंध के प्रतिरूप में उद्यान में खिले पुष्पों का चित्रण किया गया है। यदि कोई नायक व नायिका विरह वेदना से पीड़ित है तो उसके दुखः से दुखी वृक्षों का भी चित्रण हुआ है, झुकी हुई बैलों, तीखे चुभते वृक्षों द्वारा उनके मनोभावों को व्यक्त किया गया है।

किशनगढ़ शैली के कलाकारों ने चित्रों में प्रकृति को जिस अनोखे ढंग से चित्रित किया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। आम, जामुन, केले आदि के वृक्षों को बड़े ही कलात्मक ढंग से चित्रों में स्थान दिया गया है। कहीं–कहीं तो संपूर्ण पृष्ठभूमि को केल पत्रों द्वारा आच्छादित कर अद्‌भुत संयोजन किया गया है। (चित्र संख्या 3) केले, आम तथा जामुन के वृक्षों के पत्तों एवं फलों को सूक्ष्म निरीक्षण के उपरांत अलंकारिक रूप प्रदान कर चित्रित किया गया है। जिससे वास्तविक ना होने पर भी वे सजीव दिखाई देते हैं। वृक्षों का चयन एवं स्थान निर्धारण, चित्र में आवश्यकता एवं भाव निरूपण के आधार पर किया गया है जो चित्र को संवेदना

प्रदान करता है। कृष्ण–लीला के चित्रों में पृष्ठभूमि में के रूप में चित्रित प्रकृति यहां भाव सामंजस्य स्थापित करती हुई दिखाई देती है।

चित्रों में कहीं शुद्ध प्राकृतिक वातावरण तो कहीं–कहीं, कट–छटी फुलवारीयॉ तो कहीं राजसी ठाट बाट से युक्त उपवन या बाग– बगीचे चित्रित किए गए हैं। पशु–पक्षियों को भी प्रकृति के अभिन्न अंग के रूप में चित्रों में स्थान प्राप्त हुआ हैं। वानर, मृग, हाथी तोते, सारस, बगुले आदि सभी का चित्रण स्थान–स्थान पर चित्र विषय के अनुरूप किया गया है। ''किशनगढ़ के कलाकारों ने जिस पूर्ण सुंदर जीवंत, प्राकृतिक दृश्यों का अंकन किया है वैसा अन्य शैलियों में दुर्लभ है। यह प्राकृतिक दृश्य जीवन से अलग हैं, इनमें दिव्य प्रेमी युगल का समागम है।''[8]

रंगो एवं रेखाओं की दृष्टि से भी किशनगढ़ शैली में परिपक्वता दिखाई देती है। अन्य राजस्थानी शैलियों में एक ओज व भारीपन दिखाई देता है जबकि मुगल प्रभाव अधिक होने के कारण किशनगढ़ शैली में रेखाओं की कोमलता व रंगों का सूफियाना पन दिखाई देता है। लेकिन जहां मुगल शैली में रेखा और रंगों में कृ तिमता एवं ओज हीनता दिखाई देती है वही किशनगढ़ शैली की रेखाएं, अत्यंत सजीव कोमल एवं बारीक बनाई गई है, जो भाव पूर्णता प्रदर्शित करती है। इसी प्रकार रंग भी कोमलता लिए भावों के संवाहक के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। यहां कलाकारों ने विषय की भावना के अनुरूप वर्ण संयोजन किया है, जिससे चित्र अधिक प्रभावशाली बने हैं। 'सांझी लीला' तथा 'दानलीला' नामक चित्र इसका उत्तम उदाहरण है। 'सांझी लीला' चित्र में जहां भाव अनुरूप लाल रंग की प्रधानता है, वहीं 'दानलीला' नामक चित्र में पीला रंग प्रयोग किया गया है। किशनगढ़ शैली मैं जिस प्रकार चित्रकारों ने सुंदर मुखाकृति के अंकन में रुचि ली उसी तरह गौर वर्ण के प्रति भी उनका झुकाव प्रतीत होता है। चित्रों में नायिका, सखियां, बंधु–बांधव यहां तक कि दास–दासीयो में भी गौर वर्ण का प्रयोग किया

है। ''राधा का गोरा रंग, पतले संवेदनशील होंठ, घनीकाली केशराशि, ललाट पर रोली, पैरों में महावर, होठों पर लाली, साड़िया, लहंगे व चोली और आभूषणों से सुसज्जित अंग इन सबके ऊपर आकर्षक काले नयन, राधा के सौंदर्य को अभूतपूर्व आभा प्रदान करते हैं।''[9]

किशनगढ़ शैली के प्राकृतिक दृश्यों के चित्रण में अधिकतर हरे रंग की प्रधानता रही है। चित्रकारों ने हरे रंग के विभिन्न मिश्रण द्वारा चित्र को जीवंतता प्रदान की है। राधा–कृष्ण की प्रेम लीलाओं के प्रमुख उपादान के रूप में पृष्ठभूमि में चित्रित प्राकृतिक दृश्यों में फूलों के भार से झुके वृक्ष, हरीत पीली भूमि तथा स्वर्ण से आलोपित आकाश सौंदर्याभिव्यक्ति में चार चांद लगाते हैं। कवि नागरिदास तथा निहालचंद ने अनुकूल रंग योजना का सुंदर समावेश कर चित्रों के भाव अत्यंत आकर्षक बना दिए हैं, निश्चय ही नागरी दास के चित्र अत्यंत प्रभावशाली होते हुए भारतीय चित्रकला में विशिष्ट स्थान रखते हैं।

सावंत सिंह, सहज–सरल व्यक्तित्व के धनी एवं भावुक हृदय के कवि थे। कलाकार का यही भावुक हृदय उन्हें राजा होते हुए भी जन सामान्य से जोड़े रखता था। यही विचार उनकी कल्पना और काव्य का भी आधार बने एवं इसी कारण लोक संस्कार एवं लोक संस्कृति का रंग किशनगढ़ शैली में दिखाई पड़ता है जो कि चित्रों में उत्सव परंपरा के रूप में सृजित हुआ। किशनगढ़ शैली के चित्रों में लोक संस्कृति के विषय, राजसी तथा धार्मिक बाना पहने विभिन्न त्योहारों एवं उत्सवो के रूप में चित्रित हुए, जिनमें राधा कृष्ण को केंद्र में रखकर त्योहारों का चित्रण किया गया है। 'होली' 'दीपावली' जैसे चित्रों में कहीं राधा–कृष्ण एवं गोपियों को भावपूर्ण मुद्राओं में चित्रित किया गया है तो कहीं सुंदर सिंहासन पर बैठे राधा–कृष्ण के समक्ष नृत्य करती हुई गोपीकाओं को, फुलझड़ी छोड़ती हुई सखियों के साथ संयोजित किया गया है, वृहद आकार के इन चित्रों में कलाकार

की विशाल कल्पना को बड़े ही भाव पूर्ण रूप में संयोजित किया गया है। (चित्र संख्या 4)

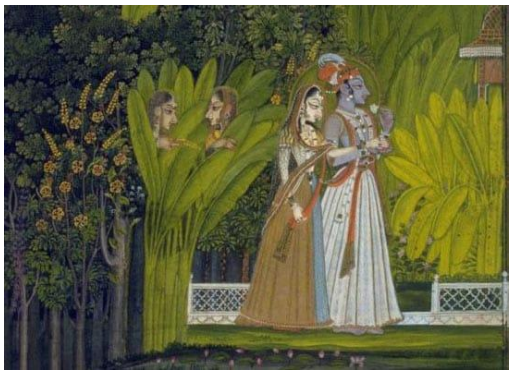

(चित्र संख्या–3)

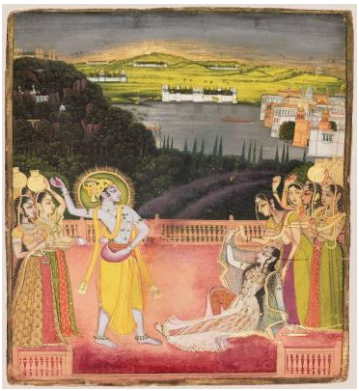

(चित्र संख्या–4)

भक्ति रस में डूबी किशनगढ़ चित्र शैली के प्रमुख विषय राधा–कृष्ण की प्रेम लीला हैं, जिनमें प्रकृति–पुरुष एवं आत्मा से परमात्मा के मिलन का सौंदर्य भाव निहित है। जो आध्यात्मिकता से सरोबार है। सावंत सिंह की प्रेयसी 'बनी–ठनी' किशनगढ़ चित्र शैली के मूल में है, जिसकी नागरीदास ने प्रेयसी के रूप में आराधना की एवं इसके प्रति उनका निश्चल प्रेम ही उनकी काव्य धारा में प्रस्फुटित हुआ, जिसे निहालचंद ने चित्र रूप दिया। ''बनी ठनी वास्तव में निष्पाप केशौर्य के सौंदर्य का चित्रण है। यह चित्र, चित्र नहीं बल्कि कला के आकाश से टपकी ऐसी स्वाति बूँद है जो किशनगढ़ शैली की सीप में समाकर कला का अमूल्य मोती बन गई''[10] राधा का यह रूप सदियों तक आने वाले कलाकारों के लिए प्रेरणा स्वरूप बना रहेगा। किशनगढ़ के चित्रों में सभी नारी आकृतियों में इसी स्वरूप की कल्पना कर, कोमल व छरहरी, तीखे नाक नक्श वाली, गोपियों एवं सखियों का चित्र निरूपण किया गया है। सुंदर लहंग, ओढ़नी व मोतीमाल से सज्जित यह नारी आकृतियां इस शैली को ऐसी भव्यता प्रदान करती है जिसका कोई दूसरा उदाहरण विश्व कला में नहीं दिखाई देता।

किशनगढ़ चित्र शैली कवि नागरी दास और चित्रकार निहाचंद की भाव–भक्ति रूपी पृष्ठभूमि पर अद्‌भुत रंगो और रेखाओं से सृजित अद्‌भुत कल्पना

सृष्टि है। ''किशनगढ़ की चित्र शैली के इतिहास में महाराजा नागरीदास और चित्रकार निहालचंद का वही स्थान है, जो कांगड़ा की शैली में महाराजा संसारचंद और उनके कलाकारों का स्थान है''[11] यद्यपि निहालचंद दरबारी कलाकार थे पर सावंत सिंह के आश्रय में उन्होंने नागरीदास की काव्य कल्पना को अंतर्मन से अनुभूत कर जिस प्रकार उसे चित्र रूप दिया वह एक सच्चा कलाकार ही कर सकता है। नागरिदास की 'बणी–ठणी' की काव्य–कल्पना निहालचंद की अद्‌भुत तूलिका से इस प्रकार फलक पर राधा रूप में उतरी की एरिकसन को उसे 'राजस्थान की मोनालिसा' नाम देना पड़ा। निहालचंद सक्षम चित्रकार के रूप में चित्रण के हर पक्ष में सफल हुए हैं, फिर चाहे वह नारी आकृति के रूप में 'बणीठणी' का चित्रण हो, चाहे हरी–भरी वनस्पति के रूप में पृष्ठभूमि का चित्रण हो या राजसी ठाठ बाट के चित्रों में स्थापत्य का अंकन हो, चाहे पशु पक्षियों की चहचहाहट एवं किलोल से भरी प्रकृति हो या फिर नागरी दास की भक्ति भाव की पृष्ठभूमि पर चित्रित आध्यात्मिक रचनाएं। उन्होंने चित्रों में रंगों और रेखाओं का जादू इस प्रकार बिखेरा है कि दर्शक मंत्रमुग्ध सा हो जाता है। विशाल आकार के चित्रों में संयोजन की दृष्टि से भी उनकी परिपक्वता का आभास होता है। विशाल वनस्पति के मध्य स्थापत्य के साथ कृष्ण–राधा एवं गोपियों का अंकन चित्रों में इस प्रकार किया गया है कि दर्शक की आंखें स्वतः ही नायक–नायिका पर ठहर जाती है, और अन्य आकृतियां संयोजन में सहयोग करती, चित्र के मूल भाव को पूर्ण सौंदर्य के साथ अभिव्यक्त करती प्रतीत होती है।

राधा, राधा–कृष्ण, राजा सावंत सिंह की पूजा, राजा नागरी दास की उपासना, कृष्ण राधा को उपहार में पुष्प देते हुए, एकांत में प्रणय, नौका विहार, होली, दीपावली, सांझी लीला, झील से कमल एकत्रित करते कृष्ण, प्रेमियों का मिलन, राधा का श्रृंगार, पवित्र युगल, वन कुंज में राधा कृष्ण, राधा को माला पहनाते हुए, तांबूल सेवा, तांबूल सेवन, राधा कृष्ण के दर्शन, प्रणय निवेदन जैसे

असंख्य चित्र किशनगढ़ शैली की विश्वकला को अमूल्य धरोहर है। यह चित्रशैली एक ऐसा रचना संसार है जिसके दर्शन से हम एक ऐसे सौंदर्य जगत में प्रवेश करते हैं जहां रस हे, भाव है, संतुष्टि है, तड़प है और भक्ति –भावमयी ऐसी शांति है, जो मोक्ष के समान है। इसीलिए जब कवि एरिक्सन ने प्रथम बार किशनगढ़ शैली के चित्रों को देखा तो उनका कवि ह्रदय बोल पड़ा ''वह मेरे लिए विस्मय के उत्कर्ष का क्षण था। मुझे लगा जैसे मेरी आंखों के सामने अबीसीनियन संगीत साकार हो गया। इतनी सुंदर और संगीतात्मक कृष्ण लीला की रंगीन सृष्टि मैंने पहली बार देखी। राधा कृष्ण का अलौकिक सौंदर्य, अद्भुत स्थापत्य और निसर्ग की स्वर्गीय शोभा, यह सब मेरे सामने साकार हो उठे''[12]

निसंदेह किशनगढ़ शैली एक शैली के रूप में ऐसा चित्र संसार है जो अद्वितीय है। चाहे मुगल शैली हो, कांगड़ा शैली हो या राजस्थानी शैली की अन्य उप शैलियां अथवा अन्य कोई चित्र शैली, भाव भक्ति, सौंदर्य, सजीव ता हो या रंगाकन अथवा रेखांकन का तकनीकी पक्ष, किसी भी पक्ष में इसका कोई सानी नहीं है राजस्थानी चित्रकला की उप शैलियों में किशनगढ़ शैली अपनी भव्यता में अद्वितीय है। ''किशनगढ़ शैली के चित्र न केवल भारत में वरन विश्व भर में प्रसिद्ध है। काव्य और कला का जो कमनीय संगम हमें किशनगढ़ शैली में मिलता है, वह अद्वितीय है। विषय के सही प्रतिपादन और विश्वास पूर्ण आलेखन के संदर्भ में देखा जाए तो किशनगढ़ शैली के लघु चित्र तत्कालीन कलाकारों की साधना और भावना की जीवंत साक्षी देते हुए से प्रतीत होते हैं''।[13]

संदर्भग्रंथ सूची

1. मारवाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, विक्रम सिंह राठौड़, प्रकाशन– राजस्थान ग्रंथागार गेट, जोधपुर, प्रथम संस्करण 1996
2. किशनगढ़ शैली, डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ संख्या 19

3. मारवाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, विक्रम सिंह राठौड़, प्रकाशन–राजस्थान ग्रंथागार गेट, जोधपुर, प्रथम संस्करण, 1996
4. सामाजिक नियंत्रण व सामाजिक परिवर्तन रविंद्रनाथ मुखर्जी, पृष्ठ संख्या 105
5. भारतीय चित्रकला, वाचस्पति गैरोला, मिश्र प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1963
6. समकालीन कला, अंक 19, कुमार स्वामी का भारत चिंतन : कला दृष्टि, डॉ. विद्यानिवास मिश्र, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 20
7. भारतीय चित्रकला का विकास, आर. एस. अग्रवाल, पृष्ठ संख्या, 104
8. द क्लासिकल ट्रेडीशन इन राजपूत पेंटिंग, प्रतापदित्य पाल, पृष्ठ संख्या–40,
9. कादंबिनी, जून –1997, पृष्ठ संख्या 57
10. किशनगढ़ चित्र शैली, डॉ अन्नपूर्णा शुक्ला, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ संख्या 60
11. भारतीय कला और कलाकार, ई कुमारिल स्वामी पृष्ठ संख्या 40
12. किशनगढ़ चित्र शैली, डॉ अन्नपूर्णा शुक्ला, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ संख्या 58
13. भारतीय कला के विविध रूप, प्रेम चंद गोस्वामी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ संख्या 91